बन्दिश – किसी भी कला को जब उनके माध्यम द्वारा व्यक्त किया जाता है तो उस कला का सम्पूर्ण अस्तित्व हमारे समक्ष व्यक्त हो जाता है। यथा चित्रकार को कला का वह व्यक्तित्व 'चित्र'के माध्यम से, मूर्तिकार को कला की उपज 'मूर्ति' के माध्यम से, स्थापत्यकार का द्वारा बनाया 'भवन' के माध्यम से, और कवि को कविता के माध्यम से। किसी भी कला के विविध अवयवों को एक रूपाकृति प्रदान करने हेतु समष्टि रूप में एक आकार प्रदान किया जाता है तो उसे विविध कलाओं में कलाकृति कहते है परन्तु संगीतकार जब संगीत के विविध अवयवों को गूंथकर एक रूपाकृति प्रदान करता है तो संभवतः वही बंदिश का रूप ले लेती है। ये बंदिश के विविध अवयव संगीत से ही उपजे है – लय, ताल, स्वर, और पद आदि। गेय संगीत की बंदिश में साहित्य पद का रूप ले लेता है परन्तु वाद्य संगीत की बंदिशों में वाद्य के विविध बोलों के माध्यम से, जो निरर्थक प्रतीत होते है, एक सशक्त रूप व अर्थ प्रदान करते है, उन्हें बन्दिश कहा जाता है।

बंदिश का शब्दगत अर्थ

विभिन्न शब्दकोषों में बंदिश के जो अर्थ प्राप्त होते है वह इस प्रकार है – **'मानव हिन्दी कोष** में बंदिश का अर्थ बांधने की क्रिया से ले लिया जाता है।'

यथा –

बंदिश – बांधने की क्रिया या भाव, कविता के चरणों, वाक्यों आदि में होने वाली शब्द योजना, रचना प्रबंध जैसे गीत अथवा ग़ज़ल की बंदिश, कोई महत्वपूर्ण काम करने से पहले किया जाने वाला आयोजन या आरम्भिक व्यवस्था।[1]

हिन्दी साहित्य कोष में बंदिश का अर्थ व्यवस्था इत्यादि से लिया है। यथा –

बंदिश – व्यवस्था, आयोजन, संबद्ध वाक्य, रचना, प्रकृष्ट बंधन।[2]

हिन्दी व्युत्पत्ति कोष में

बंदिश – (स्त्री), बांधने कि क्रिया या भाव, पहले से किया हुआ प्रबंध, रोक, रूकावट।[3]

संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ में बंदिश शब्द में संनिहित बद्ध, बन्ध, बन्धु इत्यादि संज्ञाऐं बंदिश के लिए प्राप्त होती है। यथा –

बद्ध – (वि.), (बन्ध+क्त) बंध हुआ, जकड़ा, बंद किया हुआ, जुड़ा हुआ।

बन्ध – बन्धना, पकड़ना, लगाना।

बन्ध् – (बन्ध+ध) बंधन, जंजीर, संबंध, विशेष प्रकार की पद रचना।[4]

प्रबंध और बंदिश का शब्दार्थ विभिन्न जगहों पर प्रायः एक सा मिलता है। भाषा की दृष्टि से यदि बंदिश और प्रबंध के अर्थ को देखें तो पता चलता है कि विभिन्न शब्दकोषों में इनके शब्दार्थ प्रायः समान पाये जाते है। यथा –

संस्कृत हिन्दी कोष में –

प्रबंध – (प्र+बंध+धञ)

बंधन, जोड़ या गॉठ, अविच्छिन्नता, सातात्य, साहित्यिक कृति या रचना, व्यवस्था, योजना या कल्पना।[5]

बंदिश से अर्थ साम्य रखने वाले अंग्रेजी शब्द Composition के अर्थ भी प्रायः यहीं देखने में मिलते हैः–

Composition – Essay, Musical, Composition

(रचना, लेख, सांगीतिक रचना)

Vandh – a type of chant material song.

Bandh – To bind, to fix, chain to bind, round, arrange, set up (a limit) Bridge, Compose.[6]

Groves dictionary of Music & Musician में (Composition) का अर्थ इस प्रकार से लिया गया है :– 'यह एक रचना है जो संगीत रचयिता द्वारा की जाती है।[7]

हिन्दुस्तानी संगीत में प्रायः रचनाओं को बंदिश, गत अथवा चीज इत्यादि नामों से जाना जाता है।

वस्तुतः बंदिश ही गत और गत ही बंदिश है। दोनों ही नाम सांगीतिक रचनाओं का बोध कराते है परन्तु 'गत' वाद्यों की निजी विशेषता है। अगर किसी रचना के लिए 'गत' शब्द प्रयुक्त होना है तो वह निर्विवाद वाद्यों पर बजाने की ही रचना होगी क्योंकि उसमें किसी वाद्य विशेष के बोल ही समाहित होगें। स्वर, लय, ताल, छन्दोबद्धता व वाद्य विशेष के बोलों के होने से ही 'गत' नाम है।

अतः बंदिश शब्दार्थ के साथ–साथ यहॉ गत शब्दार्थ को भी समझ लेना यथोचित होगा।

विभिन्न शब्दकोंषो में गत के लिए निम्नलिखित संज्ञाऐं प्राप्त होती है :–

गतः – संबध रखने वाला, बीता हुआ, लुप्त।[8]

गत – (गात्र, प्रा0, गत) शरीर, नियम इत्यादि।[9]

''गत'' शब्द में ''संबद्ध रखने वाला'' से तात्पर्य सांगीतिक रचना में प्रत्येक स्वर का एक दूसरे से सांमजस्य स्थापित होना।

किसी भी कला को जब उसके माध्यमों द्वारा व्यक्त किया जाता है तो उसे कला का सम्पूर्ण अस्तित्व हमारे समक्ष व्यक्त हो जाता है। यथा –चित्रकार की कला का वह व्यक्तित्व चित्र, मूर्तिकार की कला की उपज मूर्ति, स्थापत्यकार का बनाया मकान, कवि की कविता और संगीतकार द्वारा प्रस्तुत किसी राग की बंदिश।

बंदिश की परिभाषा

बंदिश एक स्वर तथा ताल से बंधी हुई संगीत रचना है। स्वरबद्ध तथा तालबद्ध वह रचना, जो राग नियमों पर आलम्बित हो शास्त्रीय संगीत के अनुसार बंदिश कहलाती है। सुगम संगीत में बंदिश का अर्थ है किसी काव्य रचना को स्वर एवं ताल में बांधकर गेय बनाना।

लोकवाद्यों में लोकगीतों की परम्परागत धुनों को बजाने की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है, किन्तु शास्त्रीय संगीत में विभिन्न रचनाओं के लिए शास्त्रीय नियम है, जिनका पालन अनिवार्य रूप से संगीतज्ञों को करना होता है। संगीत की बंदिश का कोई भी रूप हो, ध्रुपद, धमार, ख्याल, ठुमरी टप्पा आदि, तत् वाद्यों की गत, तबला–पखावज के कायदे, पेशकार, परन अथवा नृत्य रचनायें, सभी के लिए संगीतशास्त्र में कुछ नियम परम्परा से नियमों पर आधारित है। राग लक्षणों का ध्यान रखते हुए ऐसा सृजन जो वाद्यों पर बजाकर अथवा गायकों द्वारा गाकर श्रोंताओं के रंजन में सहायक हो वह बंदिश कहलाता है।

बंदिश की परिभाषा देते हुए **भास्कर चंदावर्कर** लिखते है –

'In Indian Music Bandish is at once the essence, the distilled spirit of the Raga, and foundation on which the huge structure of the Raga can be equation that gives immediate and direct access to the beauty of a raga.''[10]

प्रो० देवव्रत चौधरी के अनुसार – 'बंदिश में एक बन्धन का अर्थ समाया हुआ है। जैसे सामाजिक और सांसारिक बंधन होते है वैसे ही बंदिश के सांगीतिक बंधन है जो लय ताल के दायरे और राग नियमों में बँधी रहती है।'[11]

श्री बलंवतराय वर्मा जी ने वाद्य संगीत के संदर्भ में बंदिश को निम्नवत् परिभाषित किया है– ''राग के स्वरूप को दिखाने वाली, मिज़राब के बोलों से सजी हुई, जिसमें से राग विस्तार के लिए आलाप और तानें भी मिल जायें, वहीं बंदिश है।''[12]

डॉ० अनुपम महाजन जी के शब्दों में :–' In Music a composition (Bandish) of raga depicts Ragas's character in a nutshell.'[13]

बंदिश, स्वर लय की कड़ी में बँधी रचना को कहा जाता है। राग, जाति व शास्त्र को कल्पना के साथ जोड़कर रचना अथवा बंदिश का जन्म होता है।[14]

डॉ विजय चंदोरकर के शब्दों में

'' प्राचीन काल से भारतीय संगीत में राग तथा ताल में बँधी हुई रचना को सामान्य रूप से गीत ही कहा जाता है। इसे हम आज बंदिश तथा वाद्य संगीत के सन्दर्भ में गत कहते है।[15]

प्रो० विरेन्द्र कुमार जी के शब्दों में बंदिश को इस प्रकार परिभाषित किया गया है :–

'' बंदिश से पाबंदी और बंधन जैसे शब्दों का रूप साम्य है इसीलिए राग नियमों से ओत–प्रोत ऐसी रचना जिसमें स्वर, लय और ताल का एक चक्र हो अथवा अच्छा प्रंबध किया गया हो, उसे बंदिश कहते है।[16]

बंदिश के सिद्धान्त

तथ्यों की परम्परा और व्यवस्था को गति का ही सूत्र 'नियम' अथवा सिद्धान्त कहलाता है। नियम एक प्राकृतिक विधान है, जो स्वतंत्र और अनिवार्य है, प्राकृतिक जीवन में उसका शास्त्र है। सिद्धांतों को हम सांस्कृतिक नियम कह सकते है, जो मानव चेतना से निःसृत होकर जीवन की श्रेष्ठ दिशाओं और सार्थकता के मार्गो का निर्देश करते है।

''बाह्य दृष्टि से ये नियम और सिद्धांत स्थापनाएँ है किन्तु आन्तरिक दृष्टि से ये धारणाएँ है। स्मृति और व्यवस्था बुद्धि की धारणा के दो नियम है। हमारे सामान्य अनुभव, व्यवहार, विज्ञान शास्त्रादि सभी में इस स्मृति और व्यवस्था का योग रहता है।''[17]

सांगीतिक बंदिशों के नियमों की चर्चा के चलते एक साक्षात्कार में **प्रो० देवब्रत चौधरी** ने बताया कि ''नियम से जो बंदिश होती है वह अधिक कामयाब बंदिश होती है। उसमें राग की छवि दिखना आवश्यक है। ऐसी जगह पर सम हो कि राग का स्वरूप ना बिगड़े, वहीं बंदिश अच्छी

है जो राग का स्वरूप निखारे। राग के वादी संवादी के चलन से राग का रूप निखारे अर्थात् राग की पूरी छवि सामने दिखनी चाहिए।''[18]

डा. अनुपम महाजन जी के अनुसार – किसी राग में बंदिश की रचना मात्र ही कर देना पर्याप्त नहीं है और यह क्रिया यहॉ पर समाप्त नहीं हो जाती बल्कि बंदिश को जब प्रायोगिक रूप से गाया –बजाया जाता है तभी वह किसी राग का चेहरा अर्थात् जिसमें उस राग की सभी मुख्य विशेषतायें उजागर हो उसे स्पष्ट करती है।

आपके द्वारा बंदिश के जिन नियमों की चर्चा की गई है वह इस प्रकार है :–

1. बंदिश में प्रयुक्त स्वरावलियां अर्थयुक्त और ऐसी हो कि समुचित स्वरों में ही राग का स्वरूप स्पष्ट हो जाऐ।

2. वादी–संवादी स्वरों का निर्धारण ऐसा हो कि वे स्वर अपनी स्पष्टता को अपने प्रभाव से उजागर कर सके।

3. बंदिश अपने सम और खाली स्थान को बखूबी परिलक्षित करें और बंदिश का मुखड़ा पूर्ण रूप से बंदिश की शुरूआत में ही दिखाई दे।

4. बोल बनाव का प्रत्येक राग की बंदिश में बराबर महत्व हो।

5. किसी भी बंदिश में स्थाई और अन्तरें का महत्व बराबर रहना चाहिए। प्रायोगिक रूप से जो नियम प्रस्तुतिकरण के चलते सामने आते है। उनमें किस स्वर पर कितना न्यास होना चाहिए, किस स्वर को कम अथवा अधिक देर लगाने से क्या प्रभाव उत्पन्न होता है जो भारतीय रागदारी संगीत का सूक्ष्मतम तत्व है, एक रचनाकार के समक्ष सदैव रहना चाहिए।

6. तत् वाद्यों की बंदिशों में मिज़राब के बोलों का लगाव, बनाव और ठहराव अत्यन्त महत्वपूर्ण मुद्दे हैं। मिज़राब के हर प्रहार के साथ वजन का आना जरूरी है। इन बोलों पर अलग–अलग प्रभावों में परिवर्तन आता है।[19]

इन सभी नियमों का विषय में बताते हुए आप अपने पूर्वजों एवं गुरूजनों का स्मरण करते हुए उनकी बंदिशों के आधार पर अपने विचारों को और अधिक स्पष्ट करती है।

''आप अपने दादा एवं गुरू मुश्ताक अली खॉ साहब का स्मरण करते हुए बताती है कि उस्ताद जी की बंदिशों के सिद्धान्त अथवा नियम बहुत ही गूढ़ रहते थे। बंदिश अपने आप में सभी सम्पूर्णताओं से युक्त रहती थी। इसके साथ–साथ खॉ साहब द्वारा राग को उसके शुद्ध रूप में व्यक्त किया जाता था। बंदिश को अत्यधिक प्रभावशाली बनाने के लिए कोई भी ऐसा समझौता नही करते जिससे राग हानि हो। राग की शुद्धता उनके समक्ष प्रथम सोपान थी।''[20]

नियमों अथवा सिद्धान्तों के इस विस्तारपूर्वक विवेचन के बाद जो मूल तथ्य उभरकर सामने आते है। वह इस प्रकार है :–

1. किसी राग में रचना करने से पूर्व उस राग के सम्पूर्ण स्वरों के लगाव अर्थात् अल्पत्व, बहुत्व, न्यास, वादी, संवादी, वक्रता अर्थात् राग में स्वरों के लगाव का समुचित ज्ञान होना आवश्यक है।

2. राग के गायन अथवा वादन में प्रयुक्त होने वाले सौन्दर्यवर्द्धक तत्वों जैसे – मीड़, खटका, मुर्की, जमजमा, घसीट एवं कृतन आदि का यथोचित ज्ञान।

3. प्राचीन, मध्यकालीन एवं वर्तमान प्रचलित गायन एवं वादन शैलियों का सम्पूर्ण ज्ञान।

4. परम्परागत रचनाओं का संग्रह तथा उनका अभ्यास।

5. लय के विविध प्रकार एवं ताल के छंदों तथा सम, विषम, अतीत, अनाग्रह का ज्ञान।

6. बंदिश की रचना करते समय रचनाकार को सदैव एक ही शैली को अपनाना चाहिए।

7. वादन संगीत में गत की रचना प्रक्रिया में मिज़राब के बोलों का विशेष ध्यान रखना चाहिए क्योंकि प्रचलित पारम्परिक गतों में मिज़राब के बोल निश्चित रहते है।

8. मसीतखानी गत का मुखड़ा प्रायः 12 वीं मात्रा से ही उठना चाहिए।

9. रचना करते समय सर्वप्रथम राग के स्वरों द्वारा सम्पूर्ण रचना की एक रूपरेखा तैयार कर लेनी चाहिए।

10. राग स्वरूप का चित्र मस्तिष्क में एक संस्कार की भांति रहना चाहिए।

11. राग का चलन, स्वरों का स्थान, उनका आन्दोलन आदि का भी ध्यान रखना चाहिए। जैसे राग भैरव में रे आन्दोलित रहता है।

12. यदि बंदिश में संचारी व आभोग का प्रस्तुतिकरण रहेगा तो संचारी, आभोग की तानों द्वारा उसका स्वतंत्र अस्तित्व स्पष्ट करना एक आवश्यक नियम है।

उपर्युक्त सभी तथ्यों का ज्ञान होने के पश्चात् राग की अवतारणा के साथ स्वंयमेव बंदिश की रचना होती है।

बंदिश का उद्देश्य एवं महत्व

संगीत का मूलभूत उद्देश्य आनन्दानुभूति के द्वारा चित्त को एकाग्र करके जनरंजन से भवभंजन तक की यात्रा करना है।

1. बंदिश का प्राथमिक उद्देश्य संगीत को विषय वस्तु प्रदान करना है।

2. बंदिश के द्वारा राग को एक रूपरेखा प्राप्त हो जाती है।

3. बंदिश के ग्रह स्वर से राग की आलापचारी प्रभावित होती है।

4. बंदिश ही संगीत को सुबद्धता प्रदान करती है।

5. बंदिश राग को लयबद्धता तथा छन्द योजना प्रदान करती है।

संगीत का मूलाधार लय और स्वर है। यह निर्गुण ब्रह्मा के सदृश है। जिस प्रकार निर्गुण ब्रहम की उपासना सर्व–साधारण से संभव ना होने के कारण ईश्वर को सहज रूप में पहचाननें और जाननें के लिए सगुण ब्रहम की उपासना को अपनाया गया। उसी प्रकार लय और स्वर से संतुलित संगीत के सहज आनन्द को प्राप्त करने के लिए संगीत में (सगुण ब्रहम के सदृश) रचना (बंदिश) की सृष्टि की गई होगी। रचना रहित संगीत सर्वसाधारण तो क्या विद्वानों के लिए भी पूर्ण आनन्द प्रदान करने में समर्थ नहीं अर्थात् संगीत में सहज आनन्द की सृष्टि मूल रूप से रचना पर निर्भर करती है। यही कारण है कि प्राचीन काल से आज तक भारतीय संगीत ही नहीं वरन् संसार के प्रत्येक देश के संगीत में रचनाओं का अत्यन्त महत्व रहा है। संगीत को उसके सम्पूर्ण स्वरूप में प्रदर्शित अथवा प्रस्तुत करने का संगीत रचना एक उत्कृष्ट माध्यम है। वाणी रहित मनुष्य मूक है – रचना रहित संगीत का अस्तित्व भी प्रायः मूक हो जाता है। पिंगल शास्त्र के अनुसार जिस प्रकार लयरहित किसी भी रचना को छन्द अथवा काव्य नहीं कहा जा सकता। उसी प्रकार रचना रहित किसी भी प्रकार के संगीत को पूर्ण संगीत नहीं कहा जा सकता। संगीत को पूर्णत्व प्रदान करने के लिए संगीत की रचनाऐं (बंदिश) एक आवश्यक साम्रगी ही नहीं वरन् संगीतरूपी शरीर में रचनाऐं प्राण वायु के सदृश है क्योंकि संगीत का मूल स्तम्भ सात स्वर और लय है, जिन पर संगीत रूपी भवन टिका हुआ है, वे सात स्वर की नियमबद्धता होने के कारण रचनायुक्त है। इन सातों स्वरों की रचना का आधार श्रुति है। इसके लिए शास्त्रों में इस प्रकार कहा गया है –

चतुश्चतुश्चतुश्चैव षड़ज मध्यम पंचमा।

द्वे द्वे निषाद गांधारों, त्रिस्त्री ऋषभ धैवतो।।

स्वरों के अतिरिक्त इनमें जो लय का महत्व है। वह संगीत का ही नहीं वरन् सम्पूर्ण सृष्टि का आधार है। सृष्टि की रचना ही लय के प्रादुर्भाव से प्रारम्भ होती है। सृष्टि की गति का व्यवस्थित रूप लय कहलाता है और यही लय सृष्टि के सृजन का कारण है। काव्य और संगीत में इस लय के विविध स्वरूप का प्रत्यक्ष दर्शन एवं अनुभव विविध प्रकार के छन्दों एवं रचनाओं के द्वारा ही सम्भव हो पाता है।

संगीत में मूल रूप से केवल सात स्वरों का प्रयोग होता चला आया है और वर्तमान समय तथा भविष्य में भी वही आधार रहेगा। संगीत में जो भी परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है, वह प्राचीन काल से आज तक विभिन्न प्रकार की रचनाओं के द्वारा ही हुआ है।

''रचना शब्द से ही यह भाव स्फुटित होता है कि इनमें कुछ ना कुछ नियमों का बंधन होगा। इसीलिए प्राचीन काल से शास्त्रों में रचना को प्रबंध और आधुनिक काल में बंदिश के नाम से सम्बोधित करते है।''[21]

बंदिश का महत्व

संगीत सहज ही आनन्द प्रदान करने वाली सरल कला है और इस कला को प्रदर्शित करने का माध्यम एकमात्र संगीत की रचना है।

जब संगीत विद्वान किसी राग में बंदिश रचना करते है तो उस राग में लगने वाले स्वर तथा वादी, सम्वादी, अनुवादी, विवादी एवं अल्पत्व, बहुत्व के स्वर तथा मुख्य स्वर समूह, पूर्वांग–उत्तरांग की उठान इत्यादि सभी नियमों का बंदिश में यथा स्थान निबद्धकर राग के स्वरूप को सुरक्षित रखते है। भारतीय संगीत विद्वानों को किसी राग के विशुद्ध स्वरूप का निर्णय रचना के माध्यम से हो जाता है क्योंकि राग की रचना में ही राग का पूर्णशास्त्र निहित होता है। वास्तव में भाव की अभिव्यक्ति ही संगीत का प्राण है। भाषा, छंद, गान इत्यादि सभी भाव बोधन के साधन मात्र है।

वैदिक ग्रंथों में लौकिक काव्य की रचना के पश्चात् उसे वैदिक ऋचा या वैदिक गान की पद्धति पर गाया गया तब ये वस्तुऐं जाकर लौकिक ऋचा और साम कहलाईं।

मध्य युग की बात करें जिससे बंदिश का महत्व ज्ञात होता है –

उस समय भी दो पीढ़ी के गवैये बंदिश के बोलों के आधार पर राग की धुन याद रखते थे। बंदिश के आधार पर अपनी गायकी पल्लवित करते थे। यह कोई आदर्श, स्थिति न थी। परन्तु बंदिश के बोल उनके लिए गेय पक्ष को याद रखने का साधन थे क्योंकि उन्हें बंदिश की सरगम अलग से नही सिखाई जाती थी। सरगम को वे 'हिडजे करना' कहते थे। इसीलिए गीत संग्रहों में बंदिश के केवल बोल मिलते है।

पं० भातखण्डे जी के अनुसार – ''गायक को किसी राग में एक छोटी सी सुन्दर स्वर रचना सूझती है। उसको सुरक्षित रखने के लिए अपनी रूचि के अनुसार गायक शब्द रचना करता है।''[22]

उस्ताद लोगों को प्रायः कहते सुना जाता है कि अगर तुम्हें किसी राग की विस्तारपूर्ण बंदिश आती है तो तुम उस राग के सम्पूर्ण स्वरूप को नज़दीक से देख सकते हो।

गायन–वादन के कलाकार को बंदिश के मूल अथवा मुख्य स्वर समूह के आस–पास बार–बार घूमते प्रायः सुना जाता है। विशेषकर जब वह मुश्किल अथवा कम गाए–बजाए जाने वाले रागों को प्रस्तुत करते है। जिससे राग का स्वरूप ना बिगड़ने पाऐ। इससे ज्ञात होता है कि राग के स्वरूप को बनाए रखने के लिए बंदिश का कितना महत्व है। इस प्रकार बंदिश के विषय में यह कहा जा सकता है कि यह शास्त्रीय संगीत के प्रस्तुतिकरण का मुख्य आधार है।

संगीत शिक्षक विद्यार्थियों को सर्वप्रथम राग की बंदिश ही सिखाते है बंदिश के भली–भॉति ग्रहण कर लेने के पश्चात् ही आलाप तान की ओर अग्रसर होते है। घरानेदार कलाकारों का

मानना है कि किसी राग को भली–भॉति समझने के लिए उसमें अधिक से अधिक बंदिशें सीखनी चाहिए।

बंदिश राग के रस भाव को निर्धारित करती है। यदि कोई बंदिश द्रुत लय में है तो एक पृथक अनुभूति होगी और उसी राग में बिलंवित लय से दूसरे प्रकार की अनुभूति होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि बंदिश की गति राग के रस को निर्धारित करती है। धीर, गम्भीर रचनायें बिलम्बित लय में ही शोभा देती है। जबकि चंचल चपल रचनाऐं द्रुत लय में ही सौन्दर्यानुभूति कराती हैं। इसीलिए बंदिश राग के रस को अपनी लयात्मकता के कारण एक दिशा देती है। सौन्दर्यानुभूति में बंदिश का विशेष महत्व है। बंदिश एक सीढ़ी है जिस पर चढ़कर ही हम संगीत के सौन्दर्यानुभूति के स्तर तक पहुॅचते है। इस प्रकार संगीत में रचनाकृति अथवा बंदिश वह मूल मंत्र है जो आनन्द का प्रथम तथा अंतिम सोपान है।

राग के स्वरों का ताना–बाना बंदिश के चारों ओर बुना जाता है। बंदिश को ही केन्द्र मानकर आलाप तानें नियोजित की जाती है। बंदिश के द्वारा लयात्मकता का बोध होता है। यही कारण है कि आकर्षक आलापों तथा चमत्कारिक तानों के बीच में बंदिश की पंक्तियां गाते बजाते रहते है।

बंदिश का मुखड़ा बहुत महत्वपूर्ण होता है। स्थाई में बंदिश के मुखड़े का जो स्वरूप होगा उसी के अनुरूप राग विस्तार की योजना होगी। अन्तरे में मुखड़े का सम तार षड़ज पर ही होता है और यहीं से राग के अन्तरें के स्वर विस्तार की उद्‌भावना होती है।

अतः उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि बंदिश का परम लक्ष्य राग को व्यवस्थित सुबद्ध तथा मूर्त रूप में प्रस्तुत करना है।

अब प्रश्न यह उठता है कि बंदिश का आदर्श स्वरूप कैसा हो? वे कौन सी विशेषताऐं है जो बंदिश को प्रमाणित अथवा घरानेदार बनाती है। इस प्रश्न का सामान्य उत्तर यही होगा कि जो सांगीतिक रचनायें निम्नलिखित नियमों को पूरा करती है, वह आदर्श बंदिश की श्रेणी में आ

सकती है। सामान्य तौर पर बंदिश की निम्नलिखित विशेषताऐं हो सकती है और एक आदर्श बंदिश में इन विशेषताओं का होना अनिवार्य है।

1. **ताल –** आधुनिक बंदिशों के लिए ताल अथवा तालबद्धता एक अनिवार्य अंग है। विभिन्न गीत विधाओं के साथ अनेक प्रकार की तालों का प्रचलन है। बंदिश के रूप के अनुकूल ताल का चयन करके उसी के आधार पर बंदिश को नियोजित किया जाता है। कतिपय शैलियों के साथ परम्परागत तालें ही बजाई जाती है। यथा – ध्रुपद के साथ अधिकतर चार ताल या सूल ताल का प्रयोग करते है इसी प्रकार धमार के साथ धमार ताल का प्रयोग किया जाता है। उपशास्त्रीय विधाओं के अर्न्तगत ठुमरी में अधिकतर दीपचंदी या चांचर ताल का प्रयोग तथा दादरा के साथ दादरा ताल का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार अन्य विधाओं के साथ भी विधाओं के अनुरूप ही तालें बजाई जाती है।

2. **स्वरावलि –** 'संगीत रत्नाकर' में गीत की परिभाषा करते हुए कहा गया है – ''रंजकः स्वर सन्दर्भो गीताभित्यभिधीयते'' अर्थात् कोई भी रंजक स्वर संदर्भ गीत है। यह तथ्य किसी बंदिश में स्वरावलियों के महत्व को दर्शाता है।

यदि ताल बंदिश का ढांचा है तो स्वरावलि बंदिश का प्राण तत्व है। इस स्वरावलि का रंजक होना बंदिश की एक प्रमुख विशेषता है। रंजकता ही किसी बंदिश की लोकप्रियता का मानदंड है।

डॉ० अनुपम महाजन जी के अनुसार

'' बंदिश में प्रयुक्त स्वरावलियां अर्थयुक्त और ऐसी हो कि समुचित स्वरों में ही राग का स्वरूप कायम हो जाऍं''।[23]

3. **रागानुकूलता –** रागानुकूलता बंदिश की अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता है। शास्त्रीय संगीत में बंदिश किसी ना किसी राग पर आधारित होती है। बंदिश की स्थाई की प्रथम पंक्ति

से यह स्पष्ट हो जाऐं कि यह बंदिश किस राग में निबद्ध है। बंदिश में राग लक्षणों, राग के चलन तथा अन्य नियमों का ध्यान रखा जाना चाहिए।

बंदिश राग को अनुशासित करती है। यही कारण है कि घरानेदार कलाकार बंदिश को राग नियमों का साक्षी मानते है। आज भी किसी राग के स्वरूप में शंका होने पर, शंका के निवारण के लिए किसी घरानेदार बंदिश का आश्रय लिया जाता है।

रागानुकूलता के दो सोपान है, प्रथम राग की प्रकृति के अनुकूल रचना करना तथा द्वितीय बंदिशों में राग नियमों का पालन करना। प्रथम तथ्य को रेखांकित करने के लिए प्रो० नरूला जी के इस विचार को प्रस्तुत करना यहॉ यथोचित प्रतीत होता है कि ''प्रत्येक राग की अपनी एक प्रकृति कायम रहे तो बंदिश अधिक प्रभावशाली रहेगी।''[24]

''कोई बंदिश राग में मन्द्र सप्तक में अधिक खिलेगी, मध्य सप्तक में या फिर तार सप्तक में। जैसे राग पूरिया का विस्तार मन्द्र सप्तक में, मारवा का मध्य सप्तक में और राग सोहनी का तार सप्तक में अधिक विस्तार होता है। इसलिए बंदिश में इस विशेषता का होना अनिवार्य तत्व है।''[25]

द्वितीय सोपान, राग नियमों को ध्यान में रखने के लिए हमें किसी भी घरानेदार बंदिश को केन्द्र में रखकर यह देख सकते है कि बनाई जा रही बंदिश राग के स्वरूप को उजागर करनें में सक्षम है कि नहीं। उसमें परम्परा से सभी नियमों का पालन हो रहा हो। ऐसी ही विशेषताओं को ध्यान में रखकर बंदिश की आधारभूमि स्थापित करनी चाहिए।

4. **बंदिश का साहित्य –** गेय रचनाओं में कविताबद्ध पद तथा वादन की बंदिशों में पाटाक्षर बंदिश को साहित्य प्रदान करते है। यहॉ यह उल्लेखनीय है कि वाद्यों की बंदिशों में पाटाक्षरों का अनुशासन शिथिल होता जा रहा है। इस शिथिलता का कारण यह है कि एक तो हमारे पास सभी वाद्यों के लिए पाटाक्षर नहीं। वायलिन, सारंगी, बांसुरी इत्यादि तथा दूसरे आधुनिक

समय में सितार, सरोद और वीणा की बंदिशों को ही न्यूनाधिक परिवर्तनों के साथ अन्य वाद्यों पर बजाने की परिपाटी सी चल पड़ी है। वायलिन आदि वाद्यों पर अधिकतर कलाकार गेय रचनाओं को ही बजाते है। डॉ श्रीमती एन. राजम् ने पं० ओमकारनाथ ठाकुर जी की अनेक बंदिशों को वायलिन पर बजाकर सफल प्रदर्शन किया है। वाद्य संगीत में सितार के अर्न्तगत दा, रा, दिर और द्र आदि पाटाक्षर साहित्य का कार्य करते है अथवा गेय संगीत की बंदिशों की अनुकृति शब्दगत साहित्य को ध्वन्यांकृति प्रदान करती है। यह अर्थ अनुकृति गेय रचनाओं में निहित अर्थ को ही प्रकाशित करती है। जैसे किसी गीत विशेष की वाद्य पर बजने वाली धुन को सुनकर हमें गीत निहितार्थ का ही बोध होता है। वैसे ही गेय बंदिश को वाद्य पर बजता सुनकर हमें उसमें निहितार्थ का बोध होता है।

भले ही पाटाक्षर हो अथवा गेय साहित्य, बंदिश का अपना एक साहित्य होता है। वह साहित्य बंदिश के स्वरूप एवं प्रकृति को निश्चित करता है। उदाहरण के लिए सितार में दिर दा दिर दा रा दा दा रा बंदिश के बिलम्बित स्वरूप को स्पष्ट करेगा जबकि दिर, दिर, दाऽ, रदा, ऽर, दा, दाऽ, दा, दिर, दा रा दाऽ दा रा दा रा उसके द्रुत स्वरूप को निखारेगा। दो बोलों और दो स्वरों के बीच की दूरी का निश्चय बंदिश के साहित्य द्वारा होता है। बंदिश के बोल अथवा साहित्य तथ्य युक्त होने चाहिए, जो बंदिश में बोल बॉट, तंत्रकारी, आलापचारी इत्यादि के लिए पूर्ण अवकाश दे सके। उदाहरण के लिए यदि किसी बंदिश के बोल दिर दिर दिर दिर दिर दिर हो तो उसमें बोल बॉट और आलापचारी की सम्भावना नहीं रहेगी।

5. **बंदिश का मुखड़ा** – बंदिश का वह अंश जो हमें सम का मार्ग दिखाये, मुखड़ा कहलाता है।

डॉ० अनुपम महाजन जी के अनुसार – '' मुखड़े में पूर्ण रूप से बंदिश की शुरूआत ही दिखाई दे।[26]

बंदिश के अन्तर्गत बंदिश के मुखड़े की अपनी एक अलग ही विशेषता होती है। बंदिश के मुखड़े से ही बंदिश का भाव स्पष्ट होता है, बंदिश का वजन पता चलता है, बंदिश का जुड़ाव किस पक्ष से है, यह ज्ञात होता है। उदाहरणस्वरूप– राग मालकौंस की एक बंदिश 'मन तड़पत हरि दरशन को आज' के मुखड़े से इसका भाव या रस स्पष्ट होता है कि यह भक्ति रस से परिपूर्ण है या इसमें भक्ति का भाव है और इस राग की दूसरी बंदिश 'मुख मोड़ मोड़ मुसकात जात' इस बंदिश से श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति होती है। इस प्रकार बंदिश का पूरा भाव व आकृति बंदिश के मुखड़े द्वारा मुखरित होती है। बंदिश की ताल, छन्द, लय, सौन्दर्य आदि बंदिश के मुखड़े के अर्न्तगत ही निहित होती है। प्रत्येक विधाओं के बंदिशों के मुखड़े अलग–अलग मात्राओं से प्रारम्भ होते है। जैसे बिलंबित ख्याल के अधिकतर मुखड़े 4 मात्रा के तथा द्रुत ख्याल के ज्यादातर मुखड़े 12 मात्रा से शुरू होते है। इस प्रकार अन्य विधाओं के अनुरूप जैसे ठुमरी, दादरा, टप्पा आदि के मुखड़े भी अलग–अलग मात्राओं से प्रारम्भ होते है। अर्थात् सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि बंदिश की प्रथम पंक्ति जो हमें सम तक ले जाती है, मुखड़ा कहलाती है।

मुखड़ा बंदिश का मुख होता है अर्थात् चेहरा होता है। जैसे हम किसी व्यक्ति मात्र के हाथ पैर देखकर नही कह सकते कि यह फलां व्यक्ति है, जब तक कि उसका चेहरा ना देख लें। उसी प्रकार हम किसी राग की बंदिश का मुखड़ा सुनकर उस राग रूपी व्यक्ति को पहचान जाते है।

6. **बंदिश के सौन्दर्यवर्द्धक तत्व** – सौन्दर्यवर्द्धक तत्व से तात्पर्य स्वरों को लगाने की भिन्न प्रणालियों से है। कंठ संगीत में गमक, मीड़, खटका, मुर्की, गिटकरी आदि व वाद्य संगीत में मीड़, खटका, जमजमा, घसीट, कृंतन इत्यादि इन तकनीकों अथवा उपकरणों का प्रयोग बंदिश को चित्ताकर्षक बनाता है। रागानुकूल स्वरों का लगाव बंदिश का एक आवश्यक तथ्य है।

संगीताचार्य प्रो० आर० डी० वर्माजी के अनुसार ''राग में रचना करते समय उस राग के मर्म–स्थलों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।''[27]

7. **सरसता एवं भावपूर्णता –** वैसे तो संगीत का प्राथमिक गुण सरसता ही है। रस विरहित अथवा नीरस संगीत की तो हम कल्पना भी नहीं कर सकते। यही कारण है कि संगीत का प्रारम्भिक उद्देश्य जनरंजन बताया गया है। बंदिशों में भी इस उद्देश्य की पूर्ति का होना अनिवार्य है। बंदिश की स्वरावलियां सरस एवं मनोहारी होनी आवश्यक है। बंदिश की यह प्रमुख विशेषता है कि वह रस निष्पत्ति में सहायक हो।

सरसता की आनन्दानुभूति के बाद हृदय में विभिन्न भावों का प्रस्फुटन होना प्राकृतिक है। सांगीतिक बंदिशों का यह पक्ष भावपूर्णता का प्रतीक है। इस पक्ष का बंदिशों में होना परमावश्यक है।

गेय बंदिशों में भावानुभूति के लिए बंदिशों का सार्थक साहित्य होता है। जबकि विशुद्ध वाद्य संगीत में जहॉ सार्थक साहित्य से भावसृष्टि की कोई सम्भावना नही होती, वहॉ हमें स्वरों के माध्यम से ही भाव सृजन करना होता है। स्वरों की भी अपनी एक भाषा होती है जिस प्रकार कोयल का स्वर आकर्षक तथा कौवे का स्वर शुष्क प्रतीत होता है वैसे ही संगीत में स्वर संदर्भो की रचनाओं के समन्वय से भाव सृष्टि संभव है।

'' बंदिश में स्वरावलियों का अनुचित प्रयोग उसे भावरहित बनाता है।''[28] कहने का तात्पर्य यह है कि सही स्वरों का चयन एक भावपूर्ण बंदिश के लिए अनिवार्य है। भावपूर्णता बंदिश की वह विशेषता है जिसके बिना बंदिश निर्जीव प्रतीत होती है।

प्रो० आर० डी० वर्मा जी बंदिश की रचना प्रक्रिया विषय पर अपने विचारों में इस बात पर अत्यधिक बल देते है कि '' बंदिश कलात्मक एवं भावपूर्ण हो, बंदिश की रचना प्रक्रिया में इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए।[29]

शास्त्रीय संगीत के दृष्टिकोण से राग और ताल में बंधी स्वर रचना को 'बंदिश' कहा जाता है। कंठ संगीत की बंदिशों में अर्थबोध कराने वाले शब्दों के अतिरिक्त कुछ अर्थहीन शब्दों का भी समावेश होता है। इस प्रकार संगीत प्रकार के ढांचे से कलाकार को नित नवीन दिशाबोध कराने का कार्य बंदिशों ने ही किया है। अतः इन बंदिशों के माध्यम से ही हर कलाकार अपनी क्षमतानुसार राग का प्रस्तुतिकरण कर उसे साकार रूप प्रदान करता है।

- किसी भी गीत विधा का व्यापक, सौन्दयर्ता, रंजक स्वरों से अलृकंत होना बंदिश का प्रथम नियम है।

- बंदिश के अर्न्तगत स्वर, ताल और पद का सुन्दर समायोजन होना चाहिए।

- बंदिश में प्रयुक्त होने वाली स्वरावलियों का प्रयोग शब्दों के अनुसार भाव व रसयुक्त होना चाहिए जिससे समुचित स्वरों में ही राग का स्वरूप स्पष्ट हो जाये।

- गायन की बंदिशों में बोलों का चयन राग के गायन समय के अनुसार करना चाहिए। उदाहरणस्वरूप भोर भई, शब्द प्रातःकालीन सन्धिप्रकाश रागों के लिए उचित है। इसी प्रकार ऋतुकालीन रागों में बंदिश के शब्द उस ऋतु विशिष्ट के अनुसार होने चाहिए।

- बंदिश के स्वरों का अन्तःचलन व स्वर श्रृंगार भी राग की प्रकृति के अनुरूप होना चाहिए।

- जिस प्रकार बंदिश के लिए शास्त्रीय गायन शैलियों के अर्न्तगत ध्रुपद, धमार, ख़्याल आदि के अनुरूप शब्दों का चुनाव करते है, उसी प्रकार उपशास्त्रीय विधाओं में भी श्रृंगारपरक शब्द व ऋतुपरक विधाओं में ऋतु के अनुसार एवं होरी में फाग रंग अबीर, गुलाल इत्यादि का वर्णन करते है।

- बंदिश के पद की प्रथम पंक्ति में गीत के भाव का सार निहित होना चाहिए।

- बंदिश के लिए ताल का चयन भी विशिष्ट गीत विधा के अनुरूप होना चाहिए। बंदिश का सम यदि राग के वादी स्वर पर स्थापित हो तो वह सुन्दर प्रतीत होगा।

- राग की प्रकृति बंदिश की गीत, काव्य का भाव और गायन शैली में तादात्म्य होना चाहिए।

उपर्युक्त विवरण का विस्तारपूर्वक विवेचन के बाद जो मूल तथ्य उभरकर सामने आते है। वह इस प्रकार है :–

- बंदिश चूंकि राग का प्रतिबिम्ब या दर्पण मानी जाती है और बंदिश की बनावट इस प्रकार की होनी चाहिए, जिसमें राग विशेष तौर पर मुखरित हो सके जैसे राग का विशिष्ट चलन उसके प्रधान स्वर, राग के वर्जित स्वर और रागवाचक स्वर संगतियों के आधार पर बंदिश के बोल बनाव किये जाने चाहिए।

- बंदिश में रस व भाव निष्पादन के लिए स्वरोच्चारण के साथ–साथ शब्दोच्चारण का समन्वय अति आवश्यक है इसलिए बंदिशों में स्वर एवं शब्द तथा रागों की मुख्य स्वर संगतियों का समन्वय होना अति आवश्यक है।

- बंदिश में शब्दों का चयन, राग में लगने वाले स्वरों एवं राग गायन समय के अनुकूल होना चाहिए। प्रातःकालीन रागों में रात्रिकालीन शब्दों का प्रयोग नही होना चाहिए क्योंकि इससे राग का प्रभाव नष्ट हो जाता है।

- राग की प्रकृति और स्वरूप के अनुसार तालों का चयन से करना चाहिए। उदाहरणस्वरूप चंचल प्रकृति के रागों में उसकी प्रकृति के अनुरूप तालों का प्रयोग करना चाहिए। उसी प्रकार शैली के अनुसार भी तालों का चयन करना चाहिए।

सन्दर्भ

1. मानक हिन्दी कोष (चतुर्थ भाग) राम चन्द्र वर्मा, पृ. 380
2. हिन्दी साहित्य कोष (भाग 1), पृ. 290
3. हिन्दी व्युत्पत्ति कोष – डा० नरेश कुमार, पृ. 350
4. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ – चर्तुवेदी द्वारा प्रसान, पृ. 400
5. संस्कृत हिन्दी कोष (तृतीय संस्करण) वामन शिव राम आप्टे
6. English Hindi Oxford Dictionay, Pg. 202
7. Groves Dictionary of Music and Musicians – ERICBLOM Pg. 96
8. आधुनिक हिन्दी शब्द कोष – डॉ. गोबिनद चातक, पृ. 173
9. अपभ्रंश हिन्दी कोष – डॉ. नरेश कुमार, (भाग 1) पृ. 287
10. Aspects of Indian Music – Sumatimutatkar, Pg. 198 (Composition and Improvisation – An Essay by Bhaskar Chadavaarker)
11. प्रो. देवव्रत चौधरी जी से साक्षात्कार के एक लेख में
12. श्री बलवंत राय वर्मा जी से साक्षात्कार के एक लेख में
13. Ragas of Indian Classical Music – Dr. Anupam Mahajan, Pg. 14
14. संगीत – जून अंक, 2001
15. भारतीय संगीत में निबद्ध तथा अनिबद्ध गान – डॉ. विजय चंदोरकर, पृ. 2
16. Significance of Compositions Forms in Hindustani Classical Music, Manju Shree Tyagi.
17. सत्यं शिवम् सुन्दरम् – डॉ. रामनन्द तिवारी, पृ. 25
18. संगीत – पृ. 94
19. डॉ श्रीमती अनुपम महाजन के द्वारा साक्षात्कार के एक लेख में
20. वहीं

21. Vageeshwari, July – Dec. 1987 (Vol 1,2)

22. वहीं

23. छायानट अंक – अप्रैल–जून 1987 पृ. 17

24. संगीत – जुलाई अंक, 1977

25. प्रो. नरेन्द्र नरूला जी के एक साक्षात्कार के एक लेख द्वारा उद्धृत

26. Indian Music & Ustad Mushtaq Ali Khan Edited by Pt. Debu Chaudhari, (An Aritcle by Dr. Anupam Mahajan)

27. संगोष्ठी में प्रो. आर. डी. वर्मा द्वारा प्रस्तुत विचारधारा

28. Aspects of Indian Music – Sumatimutatkar, Pg. 198

29. संगोष्ठी में प्रो. आर. डी. वर्मा. द्वारा प्रस्तुत विचारधारा